International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 30-32

बृहत्त्रयी में राष्ट्रीय भावना

डॉ० निशा

पी–एच० डी० (संस्कृत), हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल, शिमला, भारत।

प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य अत्यन्त विस्तृत है। बृहत्त्रयी शब्द संस्कृत साहित्य में बहुत प्रचलित रहा है। बृहत्त्रयी के अन्तर्गत तीन महाकाव्य सम्मिलित है–किरातार्जुनीय, शिशुपालवध तथा नैषधीयचरित। महाकवि भारवि ने किरातार्जुनीय, महाकवि माघ ने शिशुपालवध तथा महाकवि श्रीहर्ष ने नैषधीयचरित महाकाव्य की रचना की है। त्रयी का अर्थ है–तीन काव्य। इन तीनों काव्य के लिए बृहत् शब्द का प्रयोग उनकी काव्य–सम्पत्ति तथा कलेवर सम्पत्ति दोनों को ही ध्यान में रखकर किया गया है। बृहत्त्रयी में अनेक प्रकार के विषय का वर्णन किया गया है। उन्हीं विषयों में प्रमुख विषय राष्ट्रीय भावना का है।

राष्ट्र

जब किसी देश के निवासी कुछ सामान्य विशेषताओं के आधार पर अपने देश को एक विशेष इकाई के रूप में देखते हुए रहने लगते हैं तो वह देश राष्ट्र की संज्ञा प्राप्त करता है। इसी आधार पर 'जिमर्न' ने राष्ट्र की परिभाषा इस प्रकार दी है– ऐसा जनसमूह जो विशिष्ट भू–भाग के प्रति तीव्रता, अंतरंगता और गौरव की संसृष्ट भावना से संयुक्त हो राष्ट्र कहलाता है।[1] प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में राष्ट्र का प्रयोग भिन्न–भिन्न अर्थों में उपलब्ध होता है। शतपथ ब्राह्मण में जनपद शब्द राष्ट्र का वाचक है।[2] महाभारत में जयद्रथ द्वारा सिन्धु, सौवीर आदि दस राष्ट्रों पर शासन करने का वर्णन किया गया है।[3] बृहत्त्रयी में भी अनेक जनपदों तथा उन जनपदों के राजाओं का उल्लेख किया गया है।[4]

राष्ट्रीय भावना

राष्ट्रीय भावना का अर्थ है राष्ट्र के प्रति प्रेम की उत्कट भावना। राष्ट्र विषयक चिंतन ही राष्ट्र–प्रेम कहलाता है। ऋग्वेद के अनुसार ऋषिगण राजाओं को यह शिक्षा देते थे कि वे दृढ़ता एवं स्थिरता से राष्ट्र की रक्षा करें और प्रजा की श्रद्धा को प्राप्त करें।[5] ऋग्वेद में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सन्देश दिया गया है जो निःसन्देह विश्व का पहला उच्चकोटि का सद्भावना सन्देश है । हमारी भाषा दूसरी भाषाओं में मिल जाए, मनुष्य और देवता की बुद्धि एक हो, हमारा ज्ञान अन्य लोगों के ज्ञान के साथ आत्मसात हो जाए तथा इस प्रकार भाषा, संस्कृति और देश का परस्पर भेद समाप्त हो जाए, सभी एक मंच पर आ जाएँ।[6] विश्वबन्धुत्व का यह पहला समस्त संसार का सबसे अच्छा सन्देश है। छान्दोग्योपनिषद् में भी कहा गया है कि हमारा देश विश्वबन्धुत्व की कामना करता है। विश्वबन्धुत्व का एक अन्य प्रसिद्ध सन्देश है कि –

> सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
> सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।[7]

अर्थात् सभी प्राणी सुखी हो, सभी निरोग हो, सब कल्याण को देखें और कोई भी प्राणी दुःखी न हो। रामायण में भी राष्ट्र धर्म को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। वाल्मीकि समग्र राष्ट्र के हितचिन्तक कवि रहे हैं। राष्ट्र के लिए राजा की स्थिति अनिवार्य थी क्योंकि राजा के अभाव में राज्य नष्ट हो जाता था।[8]
श्रीमदभवद्गीता के अनुसार वास्तविक रूप में कर्म को ही राष्ट्रीय भावना का प्रमुख तत्त्व माना गया है–

> कर्मण्यवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
> मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।[9]

इस प्रकार वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारतादि में राष्ट्रीय भावना का गुणगान दिखाई देता है।
बृहत्त्रयी में राष्ट्रीय भावना का वर्णन यत्र–तत्र दृष्टिगोचर होता है। किरातार्जुनीय महाकाव्य में द्यूतक्रीड़ा में कौरवों से पराजित पाण्डवों के वनगमन के पश्चात् दुर्योधन का अपने देश के प्रति उत्कट प्रेमभाव दर्शाया गया है। दुर्योधन कुरूदेश का शासन बहुत विनम्रता और कुशलता से करता है।[10] दुर्योधन ने प्रजा के कल्याणार्थ कूप, तालाब एवं नहर द्वारा सिंचाई की सुव्यवस्था कर दी है। वर्षा न होने पर भी कुरुदेश के निवासी आसानी से अन्न सम्पत्ति को प्राप्त कर रहे हैं।[11] दुर्योधन अहंकार से रहित होकर नौकरों से मित्रों के समान व्यवहार करता है। मित्रों से भाई के समान व्यवहार और भाई से अध्यक्ष की तरह भाव रखता है।[12] वह योग्यतानुसार मनुष्य का सत्कार करता है और उन्हें पारितोषिक वितरण करता है। दुर्योधन किसी को भी अपनी इच्छा से दण्ड नहीं देता किंतु गुरु के उपदेशानुसार जो अन्याय करता है उसी को दण्ड देता है।[13] दुर्योधन ने क्रोध पर नियन्त्रण कर लिया है जिसके कारण उसके आश्रित राजा लोग भी उसके गुणों के अनुराग से उसकी आज्ञा को माला के समान शिर पर धारण करते हैं।[14] दुर्योधन के उदारता और शौर्यादि गुणों से द्रवित होकर सैनिक अपनी जान पर खेलकर भी दुर्योधन का हित करना चाहते हैं।[15] महाकवि भारवि ने दुर्योधन को निर्मल यश वाला, दयावान, प्रजा की रक्षा तथा उनकी उन्नति के लिए तत्पर रहने वाला कहा है। दुर्योधन की कुबेर से तुलना की गई है। ऐसे दुर्योधन के गुणों से पेन्हाई (पिघली) हुई पृथ्वी स्वयमेव धनरूप दुग्ध देती है। [16]
किरातार्जुनीय महाकाव्य में अनेक योद्धाओं तथा महर्षि के इस भारतभूमि में जन्म लेने का उल्लेख किया गया है। भीष्म पितामह जैसे महान् योद्धा के समक्ष यमराज भी हारे हुए से दिखाई देते हैं।[17] महाकवि ने अर्जुन का वीरता से कुरुदेश को जीतने तथा वहाँ से धन का भण्डार लाने का वर्णन किया है।[18] तत्पश्चात् अर्जुन की एकाग्रता, ईश्वर के प्रति अर्जुन की आस्था, शिवजी के साथ युद्ध तथा अन्त में स्वयमेव शिवजी द्वारा अर्जुन को पाशुपतास्त्र देकर धनुर्वेद पढ़ाने का विवेचन किया है।[19] इसके अतिरिक्त महर्षि वेदव्यास का भी वर्णन किया है। उन महात्मा व्यास को तपस्वी, विपत्तियों के संहारक तथा पुण्य का खज़ाना बतलाया है। ऐसे महापुरुषों ने इस पृथ्वी की सेवा की है।[20]
शिशुपालवध महाकाव्य में महाकवि माघ ने भारत देश के कल्याणार्थ भगवान् विष्णु द्वारा अनेक अवतार लेने का वर्णन

किया है। माघ ने विष्णु और श्रीकृष्ण को ही एकरूप माना है। उन्होंने श्रीकृष्ण को विष्णु मानकर तीनों लोकों का स्वामी तथा जगत का सृजन, संहार और पालनकर्त्ता स्वीकार किया है। विष्णु भगवान् ने इस धरती के भार को कम करने के लिए वराह,[21] दत्तात्रेय,[22] मत्स्य,[23] कूर्म,[24] मोहिनी,[25] नरसिंह,[26] वामन,[27] परशुराम,[28] राम,[29] बलराम,[30] श्रीकृष्णादि[31] अनेक अवतार लिए हैं। शिशुपालवध महाकाव्य में माघ ने इस भारतभूमि की पवित्रता को दर्शाया है। कवि ने भारत देश की द्वारका नामक एक पवित्र नगरी का बहुत ही शोभनीय उल्लेख किया है। श्रीकृष्ण के निवासस्थान द्वारका पुरी को महेन्द्र भवन के समान सुन्दर बतलाया है और निर्मल समुद्र के जल में द्वारकापुरी स्वर्ग की छाया के समान दृष्टिगोचर होती है। [32] द्वारका पुरी के स्तम्भ सोने से बने हुए थे और महलों की देहलियाँ मरकतमणि से बनी हुई थी। वहाँ बसने वाले लोग अत्यन्त धनवान् थे। उनके पास इतनी सम्पत्ति थी कि वे उनकी मानसिकता से परे थी।[33] इससे देश की सुदृढ़ आर्थिक स्थिति का ज्ञान होता है। ऐसी द्वारकापुरी में भगवान् श्रीकृष्ण से मिलने स्वयं ब्रह्मपुत्र देवर्षि नारद पधारते हैं। तथा धरती पर शिशुपाल के पाप बढ़ने के कारण उसे मारने का इन्द्र का सन्देश श्रीकृष्ण भगवान् को देते हैं।[34] महाकवि उल्लेख करते हैं कि श्रीकृष्ण सहित अनेक देशों के राजा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सम्मिलित होते हैं। श्रीकृष्ण के सहयोग से धर्मराज युधिष्ठिर बहुत लम्बे समय तक भारत देश के सम्राट् बने थे।[35] महाकाव्य के अन्त में भगवान् श्रीकृष्ण पापी शिशुपाल का वध करके इस धरती माँ का उद्धार करते हैं।[36]

श्रीहर्ष विरचित नैषधीचरित महाकाव्य में राष्ट्रीय भावना से सम्बन्धित शोभनीय उल्लेख किया गया है। नैषधीयचरित में भारत देश की महिमा का भरपूर गुणगान किया गया है। कवि ने विदर्भ देश के राजा भीम को अत्यन्त पराक्रमी बतलाया है। शत्रु समूह विदर्भ देश के राजा भीम के नाम से भयभीत हो जाता है। भीम जैसे राजा को पाकर विदर्भ देश की भूमि इन्द्राधिपति वाली स्वर्ग की भूमि के लिए भी हंसती है।[37] विदर्भ देश के राजा भीम की पुत्री दमयन्ती इतनी सुन्दर होती है कि सौन्दर्य से स्वर्गलोक की अप्सराओं को भी पराजित करती है। इस देश की राजकुमारी के सौन्दर्य से प्रभावित होकर इन्द्र, अग्नि, यम, वरुण आदि देवतागण स्वर्ग की अप्सराओं को छोड़कर दमयन्ती का वरण करना चाहते हैं।[38] परन्तु दमयन्ती स्वर्गलोक नहीं जाना चाहती। वह अपने भारत देश से ही प्रेम करती है और कहती है कि मैं श्रेष्ठ भारतवर्ष में ही रहना चाहती हूँ। जिसे मनु आदि विचारकों ने सब वर्षों में उत्तम बनाया है।[39] दमयन्ती आगे कहती है कि भोग एवं कर्मभूमि होने से यहाँ रहकर सुख और धर्म दोनों ही साधन सुलभ है। साथ ही भारत भूमि में रहकर यज्ञों के द्वारा देवताओं को प्रसन्न करना आसान है। इन तीनों कार्यों का सम्पादन में भारतभूमि में ही कर सकती हूँ। इसके विपरीत यदि मैं इन्द्र का वरण करती हूँ तो स्वर्ग को ही भोगभूमि होने से वहाँ सुख मानकर लाभ तो कर सकती हूँ परन्तु धर्म और देव–हर्षोत्पादन नहीं कर सकती।[40] पुण्यक्षीण होने पर स्वर्गवासी सज्जन व्यक्ति भी अधोलोक में आता है। अतः यह तो अनिष्टकारक फल होने से कंकड़ रूप है और मरकर सज्जन भूमि से पुण्यातिशय होने से स्वर्ग में जाता है, अतः इसका फल श्रेयस्कर होने से शक्कर रूप है। इसी कारण मैं नल का वरण कर इस भूमि में रहना पसन्द करती हूँ।[41] स्वर्गवास, आयु के क्षीण होने पर अर्थात् मरने पर ही मिलता है। जीते जी नहीं, अतः वह अविचारित सुख है– कल्पनामात्र का, जबकि धरती पर रहने का सुख वास्तविक है। इसके अतिरिक्त स्वर्गवास स्थिर भी नहीं है, पुण्य समाप्त होते ही स्वर्ग से हटना पड़ता है। अतः देवेन्द्र की अपेक्षा पृथ्वीइन्द्र नल का वरण करना ही अच्छा है। स्वर्गवास तो अपथ्य भोजन के तुल्य है जिसका परिणाम कष्टदायक होता है।[42]

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि अपने देश के प्रति सच्चा प्रेम ही राष्ट्रीय भावना कहलाता है। राष्ट्र प्रेम की सकारात्मक अभिव्यक्ति धरती से प्रेम, सांस्कृतिक गौरव के गुणगान, ऋषि–मुनियों की वन्दना और ऐतिहासिक महापुरुषों की विजयगाथाओं के गान के रूप में दिखाई पड़ती है। बृहत्त्रयी में वर्णित अनेक राजाओं के शासनकाल के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उनके राज्य में सभी लोग सुखी और सम्पन्न थे किसी को किसी प्रकार का अभाव नहीं था तथा सभी लोग धन–धान्य से युक्त थे। वहाँ की जनता सुखी एवं सम्पन्न थी। कृषि एवं व्यापार के विकास पर अत्यधिक बल दिया जाता था। हमारे देश मे साधारण मनुष्य के अतिरिक्त भगवान् ने भी जन्म लिया है जो कि भारत देश की महानता और पवित्रता को दर्शाता है।

सन्दर्भ

1. A Nation is a body of people united by a corporate sentiment of peculiar intensity and dignity relected to a definite home country. Jimmern, The prospecture of Democracy and other Essays, P.84
2. शतपथ ब्रह्मण, 13.6.2.18
3. सिंधु राष्ट्रमुखानीह दश राष्ट्राणि यानि ह।
4. वशे तिष्ठन्ति वीरस्य यः स्थितस्तव शासने।।
5. अक्षौहिणीर्दशैकां च विनिर्जित्य शितैः शरैः।
6. अर्जुनेन हतो राजन् महावीर्यो जयद्रथः।। महाभारत, 8.5.11
7. किरातार्जुनीय, 1.35; 11.45
8. शिशुपालवध, 14.5–6, 15.1–62; 17.1–17
9. नैषधचरित, 10.37, 1.1–16, 36; 6.112; 12.78–79; 2.16
10. ऋग्वेद, 12.1.12
11. आ भारती भारतीभिः सजोषा इला देवैर्मनुष्येभिरग्निः।
12. सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक् तिòो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तु।। वही, 3.4.8
13. छान्दोग्य उपनिषद्, 7.23
14. नाराजके जनपदे प्रहृष्ट नट नर्तकाः।
15. उत्सवाश्च समाजाश्च वर्धन्ते राष्ट्रवर्धनाः।। वाल्मीकि रामायण, 2.69.15
16. श्रीमदभगवद्गीता, 2.47
17. किरातार्जुनीय, 1.1–23
18. वही, 1.17
19. वही, 1.11
20. वही, 1.12–13
21. वही, 1.21
22. वही, 1.19
23. वही, 1.18
24. किरातार्जुनीय, 3.18
25. वही, 1.35
26. वही, 1.1–47
27. वही, 2.56
28. शिशुपालवध, 19.98; 18.25; 20.33; 1.34; 14.14, 71, 86; 16.81
29. वही, 14.75
30. वही, 13.28; 19.94
31. वही, 13.28; 19.94; 14.65
32. वही, 14.78
33. वही, 1.42–47
34. वही, 6.27; 13.12; 14.74–75; 15.28; 14.76
35. वही, 14.80
36. वही, 1.67–68; 14.81; 15.21
37. वही, 2.16, 20; 19.116
38. वही 2.16, 36–38, 40–42, 57, 61, 63; 13.14; 14.86, 84; 15.31

39. वही, 1.11
40. वही, 3.46–48.59
41. वही, 1.1–75
42. वही, 14.5–6; 15.1–62; 17.1–17
43. वही, 20.1–78
44. नैषधचरित, 2.16
45. वही, 2.17–18, 6.57, 10.18, 24
46. वही, 6.97
47. वही, 6.98
48. वही, 6.99
49. वही, 6.100